इकाई 8 बौद्ध दर्शन एवं प्रमुख शिक्षाएँ

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 बौद्ध दर्शन

- 8.2.1 बौद्ध दर्शन की पूर्वपीठिका
- 8.2.2 भगवान् बुद्ध का परिचय
- 8.2.3 बुद्ध का महाभिनिष्क्रमण
- 8.2.4 भगवान् बुद्ध का प्रथमोपदेश

8.3 बौद्ध दर्शन की प्रमुख शिक्षाएँ

- 8.3.1 चार आर्यसत्य
- 8.3.2 प्रतीत्यसमुत्पाद
- 8.3.3 अष्टांगिक मार्ग
- 8.3.4 पंचशील की शिक्षा
- 8.3.5 दशशील पालन की शिक्षा
- 8.3.6 निर्वाण
- 8.3.7 अनीश्वरवाद
- 8.3.8 अनात्मवाद
- 8.3.9 संगीतियाँ

8.4 बौद्ध धर्म के ह्रास का कारण

8.5 सारांश

8.6 शब्दावली

8.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.8 बोध/अभ्यास प्रश्न (विकल्पात्मक)

8.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.10 अभ्यास प्रश्न

8.0 उद्देश्य

भगवान् बुद्ध ने संसार और उसकी समस्याओं का चिन्तन कर उन्हें दो खण्डों में विभाजित किया है। एक दर्शनपरक और दूसरा आचारपरक। धर्म का आधार चिन्तन होता है, जिस पर धर्म की आधारशिला रखी जाती है। तत्कालीन वृहत्तरभारत इसी धर्म और दर्शन की विविध व्याख्याओं में उलझा हुआ आडम्बरों में भटक रहा था। इन समस्याओं का सुनिश्चित समाधान खोजकर बुद्ध ने सभी के लिए धर्म और धार्मिक क्रियाओं का मार्ग खोल दिया। यह ईसा पूर्व में एक और क्रांति थी, जो भगवान् महावीर के बाद पूरे जोर–शोर के साथ समाज और भारत देश को नवीन चिन्तन की ओर प्रेरित कर रही थी।

भगवान् बुद्ध ने दर्शनपरक जिन बिन्दुओं की खोज की थी, उनमें क्षणिकवाद, प्रतीत्यसमुत्पाद, अनात्मवाद, अव्याकृत, नैरात्म्यवाद, शून्यवाद, विज्ञानवाद प्रमुख हैं।

धर्मपरक बिन्दुओं के अंतर्गत चार आर्य सत्य, अष्टांगिक मार्ग, दस शील, मंझिम निकाय (मध्यम मार्ग), विपस्सना और पंचशील आदि परिगणित हैं।

उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त धर्म और दर्शन के ठेकेदारों के लिए भी सीख थी, जिनमें से कईयों ने बाद में बौद्ध धर्म में विधिवत् दीक्षा भी ग्रहण की। यही कारण था कि शंकराचार्य जैसे विद्वान् को भी बौद्धदर्शन के खण्डन के लिए काफी जोर लगाना पड़ा। सम्प्रति बौद्धदर्शन एवं उसकी शिक्षाओं का संक्षिप्त ज्ञान कराना इसका उद्देश्य है।

8.1 प्रस्तावना

बौद्ध दर्शन एवं उसकी शिक्षाओं की प्रसिद्धि के कारण सभी धर्म एवं सभी दर्शनों के लोग आकर्षित होने लगे। बुद्ध ने उपदेश का माध्यम पाली भाषा को चुना जो कि उस समय की बोलचाल की भाषा थी; चूँकि पाली आम बोलचाल की भाषा थी अतः इस भाषा में लोग सहजता में बुद्ध के वचनों को समझ जाते थे। अपनी मातृभाषा में ज्ञान को ग्रहण करना सामान्य व्यक्ति के लिए भी आसान हो जाता है। अतः बुद्ध का ये प्रयोग उनकी शिक्षाओं को शीघ्रता से लोगों के मध्य प्रचलित कर सका। जहाँ शास्त्रीयज्ञान को भाषा के बन्धन में रखा जाता था, वहीं बुद्ध का ज्ञान कुम्हार जैसे गरीब समाज के अनपढ़ और सबसे निचले वर्ग के व्यक्तियों के लिए भी बोधगम्य था।

यही कारण था कि विदेशों में भी बौद्ध धर्म अल्प समय में ही फैल गया। श्रीलंका, नेपाल, चीन, जापान आदि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। जिन देशों में बौद्धधर्म फैलता गया, वहाँ के रीति–रिवाजों का बौद्धीकरण होता गया और यही नवीन परिवर्तन इसकी प्रसिद्धि का कारण भी बना। इन शिक्षाओं की प्रसिद्धि का एक अन्य कारण यह भी है कि दार्शनिक जटिलताओं से बुद्ध ने दूरी बनाये रखी। कुछ प्रश्नों को बुद्ध ने अव्याकृत कहकर उनके विषय में मौन रहना उचित समझा और यह प्रयोग इसलिए भी सफल रहा कि ऐसे प्रश्नों पर भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शनों में अंतहीन विमर्श हुआ; जिनका कोई ओर–छोर नहीं था और ऐसी समस्याओं को बुद्ध ने अव्याकृत कहकर विराम लगा दिया।

8.2 बौद्ध दर्शन

8.2.1 बौद्ध–दर्शन की पूर्वपीठिका

राजवंश से सम्बन्ध :

बुद्ध स्वयं राजवंश से सम्बन्धित थे, अतः पिता के अधिकृत मगध क्षेत्र में बौद्ध धर्म के तीव्रता से फैलने का यह भी कारण बना। साथ ही अनेक राजकुमारों का बुद्ध के साथ दीक्षा लेना भी जनसामान्य पर एक गहरी छाप डालने में सफल हेतु बना। तत्कालीन शासकों में उनके प्रति गहरी आस्था उत्पन्न हो गयी, जिसका परिणाम यह हुआ कि बौद्धधर्म जनधर्म के साथ राजधर्म के रूप में भी स्थापित हो गया और इसे राजकीय संरक्षण भी प्राप्त हुआ।

सामाजिक समानता :

सामाजिक समानता के सिद्धान्त ने इसे सर्वजन प्रिय और सर्वग्राह्य भी बना दिया। बौद्ध धर्म के प्रभाव से लोकनिन्दित जातियों में उत्पन्न लोगों द्वारा बौद्धधर्म में दीक्षा लेने पर सम्राट् भी उनके सामने नतमस्तक होने लगे थे। धर्म करने का अधिकार किसी

जाति या वर्ग विशेष नहीं था। धर्म करने की सबको छूट थी। जन्म की महानता से उठकर कर्म की कसौटी को महत्त्व दिया जाने लगा।

एक समय ऐसा भी आया जब सम्पूर्ण भारत में बौद्धधर्म प्रतिष्ठित हो गया। यही इसका स्वर्ण युग था। बाद में बुद्ध की प्रसिद्धि इतनी बढ़ी की अनेक समस्याओं के लिए बुद्ध से समाधान की अपेक्षा की जाने लगी।

मध्य का रास्ता प्रसिद्धि का कारण :

बुद्ध ने शाश्वतवाद और उच्छेदवाद के मध्य में दर्शन को समेटकर मध्यममार्ग स्थापित किया। बुद्ध के महाप्रयाण के बाद बौद्धधर्म दो खण्डों में विभाजित हो गया– हीनयान और महायान। बुद्ध की शिक्षाओं को यथावत् और कड़ाई से स्वीकारने वाले हीनयानी हो गए और बुद्ध की शिक्षाओं को कुछ छूट के साथ विश्वव्यापक बनाने वाले महायानी कहे जाने लगे। हीनयान महायान को आचार की दृष्टि से हेय मानने लगा, किन्तु विश्व में महायान के प्रसारित होने में इसकी आचारगत शिथिलता प्रमुख कारण रही –

8.2.2 भगवान् बुद्ध का परिचय :

बुद्ध का जन्म ई0पू0 563 में हुआ। इनके पिता का नाम महाराजा शुद्धोदन था। तत्कालीन भारत में शाक्य गणराज्य की राजधानी कपिलवस्तु के लुम्बिनी वन में बुद्ध का जन्म महामाया की कुक्षि से हुआ। वर्तमान में यह स्थान नेपाल में है। जन्म के छः–सात दिन बाद उनकी माता का देहान्त हो गया। माता की मृत्यु के पश्चात् इनका लालन–पालन इनकी विमाता प्रजापति गौतमी ने किया। इसी जन्मस्थान पर बाद में सम्राट् अशोक ने एक स्तम्भ स्थापित किया। इस पर लिखा है– 'हिन्द बुधे जाते ति', जो 1895 में प्राप्त हुआ।

ज्योतिषियों ने इनके चक्रवर्ती या महान् तपस्वी होने की घोषणा की। कहीं बुद्ध संन्यास मार्ग में प्रवृत्त न हो जाए, इससे चिन्तित होकर पिता शुद्धोदन ने संसार में प्रवृत्त करने हेतु सम्पूर्ण भोग–विलासिता की सुव्यवस्था बुद्ध के लिए कर दी। 16 वर्ष की अवस्था में देवदह की राजकुमारी यशोदा से विवाह भी कर दिया, जिनसे बुद्ध को एक राहुल नामक बालक उत्पन्न हुआ।

8.2.3 बुद्ध का महाभिनिष्क्रमण (गृहत्याग) :

किसी दिन बुद्ध का अपने सारथी के साथ नगर भ्रमण का मन हुआ। नगर घूमते हुए उन्होंने जीवन में प्रथम बार किसी वृद्ध, रोगी, मृतक एवं संन्यासी को देखा और सारथी से उनके विषय में पूछा। सभी के विषय में जानकर बुद्ध का चित्त अत्यधिक विचलित हो गया। संसार को कष्टमय जानकर, अन्तर्द्वन्द्व में फँसे हुए राजकुमार बुद्ध ने गृह–त्याग का निर्णय लिया।

अपनी सोती हुई पत्नी एवं बालक राहुल को छोड़कर तथा महल और समग्र भोग–विलासिता को त्यागकर संसार एवं जीवन को समझने के लिए बुद्ध 19 वर्ष की उम्र में घर से निकल पड़े। इस घटना को इतिहास में महाभिनिष्क्रमण कहा जाता है।

राज परिवार से सम्बद्ध होने के कारण बुद्ध का गृहत्याग व्यक्तिगत न होकर उनके राज्य, अधीनस्थ एवं सम्बन्धियों के लिए प्रेरणास्पद बन गया, जिसका बौद्ध धर्म की स्थापना एवं प्रचार–प्रसार में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान सिद्ध हुआ।

इधर बुद्ध जीवन के रहस्य को समझने के लिए उस समय के प्रसिद्ध साधकों, वैरागियों के समक्ष जाकर साधना करने लगे। इनमें प्रसिद्ध जैन साधक आराड कलाम एवं एक अन्य जैन साधु उद्दक रामपुत्र का उल्लेख उनके प्रारम्भिक गुरुओं के रूप में मिलता है। इन प्रसिद्ध नामों के अतिरिक्त अन्य नाम भी मिलते हैं। विविध साधना मार्गों को गहनतापूर्वक समझने की चेष्टा करते हुए तथा तदनुरूप तपस्या करते हुए भी योगी बुद्ध का मानस सन्तुष्ट नहीं हुआ। सभी प्रकार के अनुभवों से निकलकर एक बार वे विचरण करते हुए वर्तमान गया (बिहार) स्थित उरूवेला के जंगलों में पहुँचे। तब तक बुद्ध 35 वर्ष के हो चुके थे। उन्हें यहीं सम्बोधि की प्राप्ति हुई, जिसमें उन्हें चार आर्य सत्यों का ज्ञान हुआ।

बुद्ध के महाप्रयाण के पश्चात् इसकी धर्म पताका को बौद्धाचार्यों ने भली–भाँति फहराया और समय के साथ इसमें साहित्य, व्याकरण, दर्शन, न्याय, ज्योतिष, तन्त्र आदि विषयों का समावेश किया, जिससे भारतीय साहित्य समृद्ध भी हुआ। यह श्रमण परम्परा का प्रमुख अंग बनकर भारतीय वाङ्मय का अभिन्न अंग बन गया। ललितविस्तर, धम्मपद, सद्धर्मपुण्डरीक, माध्यमिक कारिका, अभिधर्मकोश, कच्चायन व्याकरण, बोधिचर्यावतार, शिक्षासमुच्चय, तत्त्वसंग्रह, दीपवंश, महावंश, बुद्धचरितम्, सौंदरनंद आदि बौद्ध धर्मदर्शन के ग्रन्थ हैं और आचार्य दिङ्नाग, वसुबन्धु, नागार्जुन, अश्वघोष, आर्यदेव, कुमारलात, असंग, धर्मरीति, शान्तिदेव आदि प्रमुख आचार्य हैं।

कुछ बौद्ध साहित्य पालि के अतिरिक्त अन्य भाषाओं में रचा गया, जिसे अनुपालि या अनुपिटक कहा गया। ये प्रायः श्रीलंका के भिक्षुओं द्वारा लिखे गये। इनमें मिलिंदप ग्रीक राजा मिलेण्डर और भिक्षु नागसेन की परिचर्चा पर आधारित है। बुद्धघोष द्वारा अट्ठकथाएँ श्रीलंका में लिखी गई, जो प्रसिद्ध हैं।

8.2.4 बुद्ध का प्रथमोपदेश :

भगवान् बुद्ध बोधिलाभ के उपरान्त काशी जनपद के निकट मृगदाव (इसिपत्तन) सारनाथ में आये। यहाँ उन पाँच साधकों को उपदेश देकर धर्मचक्रप्रवर्तन किया, जो इन्हें छोड़कर काशी निवास करने लगे थे।

ध्यान साधना से प्राप्त ज्ञान आर्य–सत्यों के रूप में जगत् को प्राप्त हुआ, जिसके चतुर्थ भेद दुःख निरोध गामिनी प्रतिपद् का विस्तृत रूप अष्टांगिक मार्ग है। यही सिद्धान्त बौद्ध–दर्शन के रूप में संसार में विख्यात हुआ।

चार आर्य–सत्यों के विस्तार को स्पष्ट करते हुए भगवान् बुद्ध ने बौद्ध दर्शन की प्रमुख शिक्षाओं को स्थापित एवं स्पष्ट किया।

8.3 बौद्ध दर्शन की प्रमुख शिक्षाएँ

8.3.1 चार आर्यसत्य

उरुवेला वन में साधना एवं चिन्तन से प्राप्त आर्य–सत्यों को जनसामान्य के मध्य उन्हीं की जनप्रचलित पाली भाषा में समझाना एक नवीन प्रयोग था, क्योंकि तत्कालीन व्यवस्था में संस्कृत भाषा का आधिपत्य था एवं क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग अकुलीन समझा जाता था। जनभाषा के प्रयोग ने दार्शनिक तथ्यों का सरलीकरण किया। इस प्रयोग ने ग्रन्थों की शोभा बने ज्ञान को जनसामान्य के मध्य प्रवाहित कर दिया। जाति, धर्म, वर्ग, पंथ के भेद को खत्म कर सभी को अपना कल्याण करने का मार्ग प्रशस्त किया। चार आर्य–सत्य क्रमशः हैं – दुःख, दुःख समुदाय, दुःख निरोध, दुःख–निरोध

गामिनी–प्रतिपद्।

क) दुःख : जन्म, बुढ़ापा, मरण, शारीरिक कष्ट, मानसिक कष्ट, अप्रिय संयोग, प्रिय वियोग, इच्छा आदि दुःख हैं। इन्हीं सब कारणों से स्वयं को जोड़कर जगत् का प्रत्येक प्राणी दुःखी है। यही संसार के प्रपंच का मुख्य हेतु है। यह प्रथम आर्य सत्य है।

ख) दुःख समुदय : यदि समस्या (दुःख) है तो उसका कोई कारण भी होना चाहिए, अतएव दुःख का कारण क्या है? यह वांछित है। प्राणियों की तृष्णा दुःख का कारण है। काम (भोग) तृष्णा, भव–तृष्णा, विभव तृष्णा– ये तीन प्रकार की तृष्णाएँ हैं। यह द्वितीय आर्यसत्य है। दुःख कार्य है और तृष्णा उस दुःख का कारण है। कार्य–कारण के इस सिद्धान्त को प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धान्त कहते हैं।

ग) दुःख निरोध : यदि संसार में कोई समस्या है तो उसका निश्चित ही निवारण भी है। दुःख ही समस्या है और उसका निवारण अथवा निरोध सम्भव है। दुःख के निरोध करने पर प्राणी को निर्वाण की प्राप्ति होती है। इसे सामान्य रूप से मोक्ष या मुक्ति कहा जाता है। अविद्या आदि बारह कारणों के नष्ट होने पर निर्वाण होता है। यही दुःख निरोध है।

घ) दुःख–निरोध गामिनी–प्रतिपद् : ज्ञान मात्र से लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती अतः भगवान् बुद्ध ने दुःख निरोध का मार्ग जानकर साधकों को उसके अनुरुप आचरण का सदुपदेश दिया, जिसे दुःख–निरोध गामिनी–प्रतिपद् चतुर्थ आर्य सत्य कहते हैं। दुःख का निषेध अष्टांगिक मार्ग में निहित है। यह शील, समाधि, प्रज्ञा का विस्तृत रूप है। इन आर्यसत्यों का ज्ञान सम्यक्दृष्टि के लिए सूर्योदय के पूर्व की लालिमा के समान है।

इन आर्यसत्यों के देखने व जानने से आस्रवों का क्षय, अपाय से मुक्ति एवं दुःख का क्षय हो जाता है। सभी भूत–भविष्यत बुद्धों के लिए चार आर्यसत्यों के ज्ञान की अनिवार्यता है।[1]

8.3.2 प्रतीत्यसमुत्पाद्

दर्शन का आधार तर्क है। अतः भगवान् बुद्ध ने तर्कों का समीचीन प्रयोग किया एवं इन्हीं को उदाहरणपूर्वक समझाकर समस्याओं का निदान किया। स्पष्ट है कि कार्य की निष्पन्नता कारण पर आधारित होती है। कार्य–कारण का क्रम ही संसार का प्रमुख हेतु है। **"अस्मिन् सति इदं भवति"** अर्थात् इसके होने पर यह होता है। आगे कार्य रूप परिवर्तित होता है एवं वर्तमान कार्य अगले कार्य के लिए कारण बन जाता है। संसार का कारण तृष्णा हैं इसके रोकने पर संसार भी रूक जाता है। इस कारण से अनभिज्ञता ही अविद्या है। अविद्या से संस्कार, संस्कार से विज्ञान और आगे नामरूप–षडायतन–स्पर्श–वेदना– तृष्णा–उपादान–भव–जाति–जरामरण का चक्र बन जाता है। ये ही द्वादश प्रत्यय हैं।

समकालीन दार्शनिक चिन्तकों के विचारों का गहनता से चिन्तन एवं विमर्श करने से भगवान् बुद्ध को ज्ञात हुआ कि न तो संसार नियति से संचालित है, न ही इसका कोई नियन्ता है, अतः स्वयं के कल्याण का प्रयास स्वयं ही करना है एवं उसका उपाय भी खोजना आवश्यक है। तर्कहीन तथ्यों पर सहज विश्वास करना बुद्ध को अस्वीकार था।

[1]संयुक्त निकाय, पृ. 360, 374.

प्रचलित किसी भी मान्यता को स्वीकारने पर किसी भी कर्म या फल का कौन जिम्मेदार होगा यह निर्धारित नहीं किया जा सकता था, अतएव भगवान् ने प्रतीत्यसमुत्पाद के सिद्धान्त को खोजकर सभी के समक्ष प्रस्तुत किया और धीरे–धीरे इसका प्रचार चहुँओर हो गया। स्वयं बुद्ध भी इस नियम का पालन करते थे। कार्य की सिद्धि कारण से ही होती है किन्तु कारण के होने पर कार्य हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है अर्थात् कारण की उपस्थिति होने पर कार्य हो ही जाये यह अवश्यम्भावी नहीं है। पाली त्रिपिटक साहित्य में इस विषय में सामान्य चर्चा ही मिलती है। बौद्ध धर्म के जितने भी सम्प्रदाय हैं उन्हें यह सिद्धान्त मान्य है। वस्तुतः यह सिद्धान्त बौद्धदर्शन की रीड़ की हड्डी है। अभिधर्म में इसके विस्तृत एवं सूक्ष्म– दोनों स्वरूप प्राप्त होते हैं। यह सिद्धान्त अविद्या का स्वरुप स्पष्ट कर परमार्थ की ओर ले जाता है। अविद्या से तात्पर्य चार आर्य सत्यों के अज्ञान से है। यह अनादि का अभ्यास है।

संयुक्त निकाय के निदान वग्ग में प्रतीत्यसमुत्पाद पर विस्तृत विमर्श मिलता है –

1. **अविद्या–** आर्यसत्यों का ज्ञान न होता।
2. **संस्कार–** काय–वाक्–चित्त– ये तीन संस्कार हैं।
3. **विज्ञान–**चक्षु–श्रोत्र–घ्राण–जिह्वा–काय और मन– ये छः विज्ञान हैं।
4. **नामरूप–** वेदना, संज्ञा, चेतना, स्पर्श और मन में कुछ होना नाम कहलाता है और चार महाभूतों से जो रूप होता है वह नाम रूप है।
5. **षडायतन–**चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय और मन– ये छः षडायतन हैं।
6. **स्पर्श–** चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय और मन– ये छः स्पर्श हैं।
7. **वेदना–** चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय और मन के स्पर्श से छः प्रकार की वेदना होती है।
8. **तृष्णा–** रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श एवं धर्म– ये छः तृष्णायें हैं।
9. **उपादान–** काम, दृष्टि, शील और आत्मवाद– ये चार उपादान हैं।
10. **भव–** काम, रूप और अरूप– ये तीन भव हैं।
11. **जाति–**जीवों का योनियों में उत्पन्न होना, स्कन्धों की उत्पत्ति और आयतनों का प्रतिलाभ करना जाति है।
12. **जरामरण–** जीवों का वृद्ध होना, दाँत गिरना, बाल सफेद होना, झुर्रियाँ पड़ना, इन्द्रियों की शिथिलता एवं मृत्यु होना ये जरामरण है।

प्रतीत्यसमुत्पाद वस्तुतः मध्यममार्ग की ही व्याख्या है। जरामरण आदि प्रत्ययों के निदान एवं उत्पत्ति को समझना जरूरी है। तभी इनसे मुक्त होना संभव है। अष्टांगिक मार्ग के पालन से कारण–कार्य का चक्र (प्रतीत्यसमुत्पाद) नष्ट होता है।

8.3.3 अष्टांगिक मार्ग

चार आर्य–सत्यों में अन्तिम आर्य–सत्य के तथ्योद्घाटन से अष्टांगिक मार्ग का विषय स्पष्ट होता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि ज्ञान के पश्चात् आचरण की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण है। इस मार्ग को मध्यम–प्रतिपदा भी कहते हैं। दो अन्तों के मध्य में रहने की शिक्षा इसमें मुख्य है। भोगों का अतिरेक एक छोर है और तपस्या की पराकाष्ठा इसका दूसरा अन्त है, इनके मध्य में ही जीवन यापन करना मध्यम प्रतिपदा है।

अष्टांगिक मार्ग के आठ चरण हैं– (i) सम्यक् दृष्टि (ii) सम्यक् संकल्प (iii) सम्यक् वाचा (iv) सम्यक् कर्मान्त (v) सम्यक् आजीविका (vi) सम्यक् व्यायाम (vii) सम्यक् स्मृति (viii) सम्यक् समाधि। ये आठों अंग मुख्य तौर पर प्रज्ञा, शील, समाधि का विस्तार हैं।

(क) प्रज्ञा	सम्यक् दृष्टि
	सम्यक् संकल्प
(ख) शील	सम्यक् वाचा
	सम्यक् कर्मान्त
	सम्यक् आजीविका
(ग) समाधि	सम्यक् व्यायाम
	सम्यक् स्मृति
	सम्यक् समाधि

i) **सम्यक् दृष्टि–** बौद्ध शिक्षाओं को सही तरीके से ग्रहण करना सम्यक् दृष्टि है। काय–वचन–मन के भले–बुरे कर्मों का यथार्थ के धरातल पर समझना अर्थात् उचित दृष्टिकोण विकसित करना।

ii) **सम्यक् संकल्प–**बुद्ध के बताये मार्ग के अनुसरण का संकल्प ग्रहण करना; चित्त से राग–द्वेष, हिंसा–प्रतिहिंसा को छोड़ने का दृढ़ निश्चय इसमें होता है। करुणा, मुदिता, मैत्रीभाव धारण करना मूल लक्ष्य है।

iii) **सम्यक् वाचा (वचन) –** सत्य बोलना, मधुर वचन प्रयोग, धर्म चर्चा में प्रवृत्ति; साथ ही झूठ, चुगली, परनिन्दा, कटु सम्भाषण, अपलाप का त्याग करना इसका उद्देश्य है।

iv) **सम्यक् कर्मान्त (कर्म) –** हिंसा–चोरी–व्यभिचार रहित कर्म करना। प्राणियों की जीवन–रक्षा का अभ्यास इसका उद्देश्य है।

v) **सम्यक् आजीविका–** हिंसा प्रधान आजीविकाओं पर विराम लगाना। जैसे– शस्त्र व्यापार, प्राणी व्यापार, माँस व्यापार, मद्य व्यापार, विष व्यापार को आजीविका का साधन नहीं बनाना।

vi) **सम्यक् व्यायाम –**इन्द्रिय संयम, शुभ विचार, पाप परिणामों से दूरी, कुतर्क से बचना, सद्भावनाओं को स्थान देना सम्यक् व्यायाम (प्रयत्न) है।

vii) **सम्यक् स्मृति –** काय–वेदना–चित्त और मन की उचित स्थितियों का स्मरण करना। इन्हीं की क्षणिकता का सदैव स्मरण करना सम्यक् स्मृति है।

viii) **सम्यक् समाधि –** प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ– इन चार प्रकार के ध्यान को करना सम्यक् समाधि है।

8.3.4 पंचशील की शिक्षा

समाज में सामंजस्यपूर्ण रहन–सहन और सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाने के लिए भगवान् बुद्ध ने पंचशील की शिक्षा प्रदान की। ये पाँच शिक्षाएँ हैं – (i) हिंसा न करना (ii) चोरी न करना (अस्तेय) (iii) व्यभिचार न करना (iv) झूठ नहीं बोलना (v) नशीले पदार्थों का प्रयोग नहीं करना। इनके शास्त्रीय नाम इस प्रकार हैं – (i) प्राणातिपाद

वेरमणी (ii) अदिन्नादान वेरमणी (iii) कामेसु मिच्छाचार (iv) मुसावादावेरमणी (v) सुर मेरय मज्ज पमादट्ठाना वेरमणी।

इन शीलों के पालन से आदर्श समाज की स्थापना होती है। विश्व के किसी भी देश की कानून व्यवस्था में इन सिद्धान्तों की झलक अनुभव की जा सकती है। पंचशील का पालन गृहस्थ को सदाचारी बनाता है और दार्शनिक ज्ञानाभ्यास से सद्गृहस्थ को निर्वाण प्राप्ति होती है। यह आत्मिक उन्नति का साधन है। अतः बुद्ध ने तत्परता से इनके पालन का उपदेश दिया है।

इस शिक्षा ने दुनिया को शान्ति, सहिष्णुता, करुणा के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। वर्तमान में वैश्विक समस्याओं का यह सार्वकालिक समाधान है। यह शिक्षा मनुष्य जीवन को सार्थक बनाती है साथ ही अन्य प्राणियों के प्रति मनुष्य में संवेदनाएँ भी उत्पन्न करती है।

यद्यपि बुद्ध ने अपनी शिक्षाओं पर भी अनायास ही मात्र बुद्ध–वचन होने से आस्था करने पर मना किया है। उन्होंने इन तथ्यों को भी तर्क की कसौटी पर कसकर ही व्यक्ति को विश्वास करने की सलाह दी है।

तापाच्छेदाच्च निकषात् सुवर्णमिव पण्डितैः।
परीक्ष्य भिक्षवो ग्राह्यं मद्वचो न तु गौरवात्।।[2]

8.3.5 दशशील पालन की शिक्षा

गृहस्थों के लिए पंचशील की शिक्षाएँ देकर भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं के लिए दसशील का विधान किया। इनमें प्रधान पाँच शील तो पूर्वोक्त ही हैं। शेष पाँच में 6 असमय भोजन त्याग, 7 परनिन्दा नहीं करना, 8 नृत्य गायन से दूरी, 9. सुगन्धित व श्रृँगारात्मक वस्तुओं के उपयोग का त्याग, 10 सुवर्ण रजत आदि बहुमूल्य वस्तुओं का त्याग। ये शेष पंचशील का पालन सांसारिक मोह से भिक्षुओं को दूर करने का उपाय है। इनके पालन से भिक्षुवर्ग का चारित्रिक विकास, व्यक्तित्व निर्माण, सामाजिक कर्त्तव्यबोध और निष्ठा में सहज प्रवृत्ति होती है।

इन शिक्षाओं को जीवन में उतारने के लिए शिक्षा केन्द्रों की स्थापना भी हुई। यही कारण रहा कि प्राचीन काल के जिन गुरुकुलों के नाम गौरव के साथ लिए जाते हैं उनमें नालंदा विश्वविद्यालय, तक्षशिला विश्वविद्यालय, विक्रमशिला विश्वविद्यालय, वलभी आदि प्रसिद्ध थे। ये सभी शिक्षाकेन्द्र बौद्ध धर्म–दर्शन की देन हैं। इनमें समस्त भारतीय वाङ्मय का अध्यापन होता था। ये वही समय था जब भारत को विश्वगुरु होने का गौरव प्राप्त हुआ।

8.3.6 निर्वाण

बुद्ध ने भारतीय मुक्ति की अवधारणा को बौद्धदर्शन में स्थान दिया, किन्तु इस प्रश्न पर मौन रहना उन्हें उचित लगा कि निर्वाण के बाद क्या होता है? उन्होंने निर्वाण के लिए दीपक का प्रसिद्ध उदाहरण दिया है। जैसे– घी, बाती के अभाव में दीपक बुझ जाता है; उसी प्रकार चित्तमलों के आस्रवों से, अनादिकालीन अविच्छिन्न धारा का प्रवाह रुकने से निर्वाण की प्राप्ति होती है। प्रवाह का अत्यन्त विच्छेद ही निर्वाण है। पुराने संस्कारों का नष्ट होना नूतन का आगमन नहीं होने पर ही निर्वाण की स्थिति बनती है। चूँकि

[2]ज्ञानसार समुच्चय, श्लोक–31.

आत्मा का अस्तित्व बुद्ध को अस्वीकार था अतएव इसको उन्होंने स्पष्ट करना उचित नहीं समझा।

8.3.7 अनीश्वरवाद

ईश्वर कर्तृत्व की अवधारणा से पनप रही समस्याओं के उपाय हेतु बुद्ध ने ईश्वर की कल्पना को सिरे से नकार दिया। उस समय ईश्वर को कर्त्ता–धर्त्ता मानना सामान्यतया भारतीय दर्शनों की विचारधारा थी। इस विचारधारा से लोगों में अकर्मण्यता का बोध तीव्रता से पनप रहा था। बुद्ध को यह विचारधारा शासक (ईश्वर) और शासित (प्रजा) का बोध करा रही थी। चूँकि बुद्ध को प्रत्येक की अवधारणा में विश्वास था, अतः उनकी दृष्टि में कोई एक ही सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता था; जो विश्व का नियन्ता हो। वे प्रत्येक प्राणी को उस परमपद के योग्य समझते हैं; क्योंकि प्रत्येक प्राणी स्वयं अपना कल्याण कर सकता है। इसीलिए **"अप्पदीपो भव"** का सूत्र सभी के लिए दिया। बुद्ध कार्य–कारण के सिद्धान्त को मानते थे, अतएव वे ईश्वर और संसार के मध्य कर्त्ता कर्म को तर्क के आधार पर ही स्वीकार करना चाहते थे। चूँकि इस विषय में कोई भी सक्षम तर्क नहीं था, अतः ईश्वर कल्पना को दरकिनार कर दिया। इस विषय पर प्रश्न उठाते हुए पूछा गया कि ईश्वर को यदि संसार का कारण भी स्वीकार कर लिया जाए तो वह उपादान कारण है या निमित्त कारण? यदि उपादान है तो स्वयं ईश्वर बुराई–भलाई आदि सद्‌गुणों एवं दुर्गुणों से व्याप्त हो जाएगा और इस तरह के सभी तर्क ईश्वर की सत्ता के विरोध में ही जाते हैं। यही अनीश्वरवाद का सिद्धान्त है।

इन्हीं कारणों से सर्वज्ञ की सत्ता पर भी बौद्ध साहित्य में पर्याप्त ऊहा–पोह हुआ है। बुद्ध किसी को भी सर्वज्ञ की कोटि में नहीं रखते हैं।

8.3.8 अनात्मवाद

बुद्ध ने आत्मा का खण्डन किया है। आत्मा का स्वरूप न तो वेदमान्य कूटस्थ नित्य है न ही शरीर के साथ–साथ आत्मा को नश्वर माना है। बुद्ध वचनों के अनुसार कारण विशेष के जुड़ने पर अर्थात् स्कन्धों के ही योग से उत्पन्न वह शक्ति है जो बाह्य भूतों की तरह क्षणिक है। मात्र चित्त के प्रवाह से शरीर सजीव रहता है। शरीर में प्रति क्षण परिवर्तन होता है। जैसे बाल्यकाल में शरीर है, उससे भिन्न युवावस्था और वृद्धावस्था में हो जाता है। अतः गहनता से विचारने पर इस शरीर की क्षणिकता का ज्ञान होता है। सदृश परिवर्तन हमारी पकड़ से परे होता है। बुद्ध ने चित्त, आत्मा और विज्ञान को एक ही माना है।

अनात्मवाद का सिद्धान्त बौद्ध–दर्शन का मूल है। किन्तु अनभिज्ञ स्वरूप उस आत्मा की सत्ता को कैसे स्वीकार किया जा सकता है? और तदनुरूप कैसे कोई भी कार्य सम्पन्न हो सकता है। बुद्ध ने अज्ञात कामिनी का उदाहरण देकर समझाया है कि जैसे कोई पुरुष किसी अज्ञात स्त्री के प्रति लालायित है, जिसके बारे में वह कुछ भी नहीं जानता है; तो वह पुरुष संसार में उपहास का ही पात्र बनता है। उसी प्रकार जिस आत्मा के विषय में कोई भी प्रामाणिक जानकारी नहीं है उसके लिए दिन–रात पुरुषार्थ करना अनुचित है।

आत्मसत्ता को मानने में अहंकार मजबूत होता है। परलोक सत्ता में अधिक विश्वास से कर्मकाण्ड और अनुष्ठान को बढ़ावा मिलता था, जिससे समस्त कार्यों की सिद्धि मानना बुद्ध को अस्वीकार था, क्योंकि जो इहलोक में प्रवृत्ति योग्य कार्यों में अकर्मण्य होकर परलोक सम्बन्धी कार्यों को साधने का इच्छुक है, वह साक्षात् इहलोक को नष्ट करता

हुआ अस्पष्ट, अप्रत्यक्ष परलोक पर विश्वास करता है।

8.3.9 संगीतियाँ

प्रथम संगीति

भगवान् बुद्ध के निर्वाण के पश्चात् उनके उपदेशों को स्मरण करके उन्हें संरक्षित करने का प्रयास किया गया। निर्वाण के तीन माह पश्चात् ही ई0पू0 483 में मगध के राजा अजातशत्रु के नेतृत्व में प्रथम धर्म संगीति का आयोजन राजगृह की सप्तपर्णी गुफा में हुआ; जिसकी अध्यक्षता स्थविर महाकश्यप उपालि (महाकस्सप) ने की। इसमें बुद्ध द्वारा प्रदत्त शिक्षाओं का संकलन किया गया। इन्हें सुत्त एवं विनय दो भागों में रचा गया। आनन्द ने सुतपिटक का गायन किया। उपालि ने विनय पिटक का पाठ किया। इसमें पाँच सौ भिक्षु सम्मिलित हुए थे, अतः यह 'पंचशतिका' नाम से प्रसिद्ध हुई।

द्वितीय संगीति

द्वितीय संगीति भगवान् बुद्ध के निर्वाण के सौ वर्ष पश्चात् ई0पू0 चतुर्थ शताब्दी (383 ई0पू0) में मगधाधिपति कालाशोक के कार्यकाल में वैशाली में आहूत हुई। परन्तु विनय सम्बन्धी मतभेदों को लेकर वज्जिपुत्तक आदि भिक्षुओं को संघ से पृथक् कर दिया गया। संघ से निष्कासित भिक्षुओं ने पाटलिपुत्र में पृथक् संगीति का आह्वान कर नवीन संघ का सृजन किया, जो महासांघिक/ महायान नाम से प्रसिद्ध हुआ। आचार पर प्रमुखता से बल देने वाले स्थविरवादी/थेरवादी हीनयानी कहलाये।

तृतीय संगीति

भगवान् बुद्ध के महापरिनिर्वाण के बाद ई0पू0 263 में पाटलिपुत्र में सम्राट् अशोक के कार्यकाल में मोग्गलिपुत्ततिस्स की अध्यक्षता में इसका आयोजन हुआ। इसमें अभिधम्म पिटक को जोड़ा गया, साथ ही भारत के बाहर बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार का संकल्प किया गया।

चतुर्थ संगीति :

यह संगीति ईसा की प्रथम शताब्दी में राजा कनिष्क के शासनकाल में कश्मीर के कुण्डलवन में आयोजित हुई। आ0 वसुमित्र की अध्यक्षता में तथा अश्वघोष की उपाध्यक्षता में त्रिपिटक का प्रामाणिक संकलन किया गया। इसी काल में ''महाविभाषा'' नामक विशाल संस्कृत ग्रन्थ भी रचा गया। पालि ग्रन्थों में नौ संगीतियों का उल्लेख प्राप्त होता है। कुछ का उल्लेख इस प्रकार है।

पुस्तकारोपण संगीति :

बुद्ध निर्वाण के 450 वर्ष पश्चात् ताम्रपर्णि (लंकाद्वीप) में ई0पू0 103–77 में वट्टगामणि अभय के शासनकाल में महास्थविर धर्मरक्षित की अध्यक्षता में मातुल जनपद की आलोक लेन नामक गुफा में यह संगीति सम्पन्न हुई। इसमें ताड़पत्र पर बुद्धवचनों को लिपिबद्ध किया गया। इसे पुस्तकारोपण संगीति कहते हैं।

शिलाक्षररोपण संगीति– बर्मा में राजा मिनदोन मिन के शासनकाल में सन् 1875 में रज्जपुंज नगर में भदंत जागर स्थविर की अध्यक्षता में थेरवादी संगीति का आयोजन हुआ। यहाँ संगमरमर की 729 शिलाओं पर बुद्धवचन प्रस्थापित हुए।

महापाषाण शैलगुहा संगीति– बुद्ध के निर्वाण के 2500 वर्ष पश्चात् 17 मई, ई0 सन् 1954 से 24 मई, ई0 सन् 1956 तक बर्मा (ब्रह्मदेश) यांगून (रंगून) में श्रीमंगल नामक स्थान पर लोकराम चैत्य के निकट विशेष रूप से निर्मित महापाषाण शैलगुफा में सम्पन्न हुई। आठ देशों– म्यांमार, कंबोडिया, लाओस, नेपाल, श्रीलंका, भारत, जर्मनी और थाईलैंड के भिक्षुओं ने भदन्त रेवत स्थविर की अध्यक्षता में अपने–अपने देश की मातृभाषा में त्रिपिटक साहित्य को लिपिबद्ध करने का संकल्प किया।

राजाश्रय– बौद्धधर्म के व्यापक प्रसार में राजाओं द्वारा इस धर्म को दिया गया संरक्षण एक प्रमुख कारण रहा। इसमें बुद्ध के समकालीन बिंबिसार, अजातशत्रु, प्रसेजित् और अन्य गणराज्यों के शासक बौद्धधर्म के प्रश्रयदाता हुए। बाद में भी अशोक, कनिष्क, हर्षवर्धन, पाल आदि शासकों ने इसे राजाश्रय प्रदान किया।

8.4 बौद्ध धर्म के ह्रास के कारण

12वीं–13वीं शताब्दी के लगभग बौद्धधर्म की जड़े भारत में कमजोर पड़ने लगी। जिन कमियों को दूर करने के लिये यह धर्म उत्पन्न हुआ एवं आगे बढ़ा अब उन्हीं खामियों का समावेश हो जाने पर यह नष्ट होने लगा। अब कर्मकाण्ड और अनुष्ठान का प्रयोग बौद्धधर्म में भी प्रारम्भ हो गया। जहाँ जनसामान्य की भाषा पाली में बुद्ध ने प्रवचन दिया; वहीं बौद्ध भिक्षुओं ने संस्कृत भाषा में रचनाएँ लिखना प्रारम्भ कीं, जो जनमानस की बुद्धि से परे थीं। इधर बुद्ध आदि की प्रतिमाओं की पूजन प्रक्रिया प्रारम्भ होने के साथ भक्तों से चढ़ावा लेने का क्रम भी चालू हो गया था। बाद में यह विलासी लोगों के हाथ की कठपुतली बन गया और बौद्ध–साधना के केन्द्र भोग–विलासिता के स्थल बन गये। बौद्ध केन्द्रों में सम्पत्ति का संचय होने से यह लुटेरों की नज़र में आने लगा और कुल मिलाकर इसके नष्ट होने के सभी कारण जुड़ने से यह अपनी जन्म–स्थली भारत में ही मृत प्रायः स्थिति में पहुँच गया।

8.5 सारांश

- बुद्ध ने सभी शिष्यों को स्वाश्रित अथवा स्वावलंबी होने का उपदेश दिया, जो आत्मदीप, आत्मशरण के नाम से प्रसिद्ध हुआ।
- चुल्लवग्ग में लिखा है कि जब शिष्यों ने बुद्ध वचनों को यथावत् स्मरण करने का प्रयास किया, तब बुद्ध ने उन्हें ऐसा करने से मना करते हुए, अपनी भाषा में स्मरण करने का निर्देश दिया।
- बौद्धधर्म से प्रभावित होकर लोगों ने अनेकानेक विहारों का निर्माण कराया; किन्तु इनमें रहने के दिशा–निर्देशों का पालन करना अनिवार्य था। इन निर्देशों को शिक्षापद कहा जा सकता है, जिसका समग्र रूप विनय है।
- वर्णभेद को नकारते हुए कर्म की प्रधानता को महत्त्व दिया, जिससे स्वयं को जन्म से महत्त्वशाली मानने वाले लोगों का वर्चस्व घटा और कर्मशील लोगों को यथोचित स्थान मिला। जन्म से महानता स्वीकारने वाले लोग क्रियाओं से शिथिल होते जा रहे थे और इस प्रवृत्ति से जब समाज में उनका सम्मान कम होने लगा, तब उन्होंने वर्चस्व हेतु अत्याचार/कदाचार का सहारा लिया। इस कारण ही बुद्ध का यह क्रान्तिकारी कदम उत्साहपूर्वक स्वीकार हुआ।

बुद्ध का जन्म राज परिवार में हुआ था और वे सम्पूर्ण जीवन अपने पिता के अधिकृत

क्षेत्रों में विहार करते रहे। साथ ही अनेक राजपरिवार के सदस्य दीक्षा लेकर धर्म का प्रचार करने में संलग्न थे अतएव बुद्ध के वचनों को गम्भीरता से सभी ने स्वीकारा। यही कारण था कि यह धर्म शीघ्रता से उनके क्षेत्र में पनपा और शीघ्र ही सम्पूर्ण भारत में स्थापित भी हो गया। अब स्वकल्याण का मार्ग सभी के लिए खुला था। बुद्ध की यह नीति तर्क प्रधान व सुधारवादी थी।

8.6 शब्दावली

बृहत्तर भारत : वर्तमान भारत से पूर्व की अवस्था, जब आस–पास के कई देश इसी भारत के अंग हुआ करते थे, जिसमें मध्य एशिया, तिब्बत, चीन, हिन्द चीन (कम्बोडिया, वियतनाम, बर्मा, थाईलैण्ड, मलेशिया) पूर्वी द्वीप समूह (सुमात्रा, जावा, बोर्निया, बाली) ईरान, तुर्किस्तान आदि इसमें समाहित हैं।

शंकराचार्य : अद्वैत वेदान्त के क्रान्तिकारी सन्त जिन्होंने पुनः वैदिक परम्परा को सुदृढ़ एवं जीवित किया।

अव्याकृत : अकथनीय, जिसकी चर्चा से कोई लाभ नहीं होता है। मोक्ष में जो विषय सहायक नहीं हैं, उन्हें नकारने के लिए अव्याकृत शब्द का प्रयोग भगवान् बुद्ध ने किया है।

शाश्वतवाद : सभी पदार्थ नित्य हैं, कभी नष्ट नहीं होते हैं।

उच्छेदवाद : आत्मा के भी नष्ट होने के सिद्धान्त को उच्छेदवाद कहते हैं। इसका प्ररूपण अजितकेश कम्बल ने किया था।

महाप्रयाण : बुद्ध के शरीर त्यागने की घटना को बौद्ध साहित्य में महाप्रयाण की संज्ञा प्राप्त होती है।

चुल्लवग्ग : यह प्रसिद्ध त्रिपिटक साहित्य का अंग है।

विहार : बौद्ध भिक्षुओं का निवास स्थान। इसमें प्रायः एक विस्तृत खुला सभा स्थल होता है।

महाभिनिष्क्रमण : राजकुमार बुद्ध के गृहत्याग की घटना को महाभिनिष्क्रमण कहते हैं। सामान्य रूप से इसका अर्थ निकल जाना अथवा बाहर जाना है।

न्यग्रोध वृक्ष : बरगद का पेड़।

आर्य सत्य : स्वतः ज्ञान से भगवान् बुद्ध ने सर्वप्रथम जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

समुदय : कारण।

तृष्णा : लोभ, आसक्ति, विशेष कामना।

प्रतीत्य समुत्पाद : कार्य–कारणवाद।

अविद्या : अज्ञान।

प्रतिपद् : मार्ग।

मध्यम प्रतिपदा : दोनों छोरों के मध्य का मार्ग अर्थात् बीच का रास्ता।

अष्टांगिक मार्ग : आठ अंग वाला मार्ग। शील, समाधि, प्रज्ञा का यह विस्तृत रूप है।

चित्तमल : चित्त शब्द मन का पर्यायवाची है। इससे उत्पन्न विकार चित्त मल है।

निर्वाण : मुक्ति।

ईश्वर कर्तृत्व : कोई व्यक्ति विशेष/सत्ता विशिष्ट इस सम्पूर्ण चराचर जगत् का नियन्ता (कर्त्ता–धर्त्ता) है।

अकर्मण्यता : क्रिया–कलाप रहित।

कूटस्थ नित्य : अपरिवर्तनीय अवस्था, अचल रूप में रहने वाला परमार्थ तत्त्व।

स्कन्ध : किसी भी चीज़ के समूह को स्कन्ध कहते हैं।

संगीति : सम्मेलन। एक स्थान पर अनेक लोगों का चर्चा हेतु एकत्रित होना।

महापरिनिर्वाण : बुद्ध के शरीर त्यागने की घटना इसी नाम से प्रसिद्ध है।

8.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. बौद्ध–दर्शन मीमांसा, पं0 बलदेव उपाध्याय, प्रकाशन– शारदा मन्दिर, बनारस, प्रथम संस्करण, 1946.
2. बौद्ध धर्म दर्शन, आचार्य नरेन्द्र देव, प्रकाशन– मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली।
3. तथागत और उनके श्रावक, लेखक डॉ0 शान्ति सिंह, प्रकाशन– हलधर प्रकाशन, वाराणसी।
4. बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, लेखक– डॉ0 गोविन्द चन्द्र पाण्डेय, प्रकाशन– हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उ0प्र0 लखनऊ, द्वितीय संस्करण, 1976.
5. तिब्बत में बौद्ध धर्म, लेखक– राहुल सांकृत्यायन, प्रकाशन– किताब महल, प्रस्तुत संस्करण, 2014.
6. बौद्ध दर्शन, पं0 राहुल सांकृत्यायन, प्रकाशन– किताब महल, 15, थार्नहिल रोड, इलाहाबाद, प्र0सं– 1944, द्वितीय संस्करण– 1948.

8.8 बोध/अभ्यास प्रश्न (विकल्पात्मक)

1. भगवान् बुद्ध किसके समकालीन थे?
   (i) भगवान् महावीर (ii) शंकराचार्य
   (iii) कालिदास (iv) भगवान् राम
2. तीसरे आर्य सत्य का नाम क्या है?
   (i) दुःख समुदय (ii) दुःख
   (iii) दुःख निरोध (iv) दुःख निरोध गामिनी प्रतिपद्
3. दुःख का कारण क्या है?
   (i) चित्त (ii) मन
   (iii) अविद्या (iv) तृष्णा

4. आर्यसत्य का बोध बुद्ध को कहाँ हुआ?
   (i) काशी (ii) सारनाथ
   (iii) रामेश्वरम् (iv) बोधगया
5. कार्य–कारण सिद्धान्त का अन्य नाम क्या है?
   (i) प्रतीत्यसमुत्पाद (ii) अव्याकृत
   (iii) अनात्मवाद (iv) शील
6. सम्राट् अशोक के कार्यकाल में कौन सी संगीति हुई?
   (i) तृतीय (ii) प्रथम
   (iii) चतुर्थ (iv) द्वितीय
7. बुद्ध का गृहत्याग किस नाम से प्रसिद्ध है?
   (i) बोधिज्ञान (ii) महाभिनिष्क्रमण
   (iii) अनात्मवाद (iv) अनीश्वरवाद
8. भिक्षु को कितने शील का पालन अनिवार्य है?
   (i) पाँच (ii) सात
   (iii) दस (iv) बारह
9. भगवान् बुद्ध की जन्मदातृ का नाम क्या है?
   (i) प्रजापति गौतमी (ii) महामाया
   (iii) त्रिशला (iv) कौशल्या
10. सम्राट् अशोक ने बुद्ध से सम्बन्धित किस स्थान पर शिलालेख लगवाया?
   (i) जन्मस्थान (ii) बोधिस्थान
   (iii) सारनाथ (iv) कुशीनारा

8.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. (i) महावीर
2. (iii) दुःख निरोध
3. (iv) तृष्णा
4. (iv) बोधगया
5. (i) प्रतीत्यसमुत्पाद
6. (i) तृतीय
7. (ii) महाभिनिष्क्रमण
8. (iii) दस
9. (ii) महामाया
10. (i) जन्मस्थान

8.10 अभ्यास प्रश्न (व्याख्यापरक)

प्र0 1 : भगवान् बुद्ध की जीवन परिचय बताएँ।

प्र0 2 : भगवान् बुद्ध ने दुनिया को कौन सी शिक्षाएँ दी हैं?

प्र0 3 : दसशील की शिक्षा को विस्तार से समझाएँ।

प्र0 4 : अनीश्वरवाद का क्या तात्पर्य है?

प्र0 5 : बौद्ध संगीतियों को समझाते हुए उनकी उपयोगिता पर प्रकाश डालें।

प्र0 6 : बौद्ध धर्म की विश्व में प्रसिद्धि के कारण गिनाएँ।

प्र0 7 : प्रतीत्यसमुत्पाद की शिक्षा को स्पष्ट करें।

प्र0 8 : अष्टांगिक मार्ग को विस्तार से समझाएँ।

प्र0 9 : बौद्ध धर्म–दर्शन की शिक्षाओं का सारांश क्या है?

प्र0 10 : बौद्ध धर्म के ह्रास के कारण स्पष्ट करें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY